जनसत्ता

28 दिसंबर, 2019

पाबंदी का रास्ता

नागरिकता संशोधन कानून (सीएए) और राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर (एनआरसी) के मसले पर समूचे देश में उभरे विरोध के दौरान कुछ जगहों पर हुई हिंसा निश्चित रूप से चिंता का विषय है। खासतौर पर उत्तर प्रदेश में पिछले दिनों हुए प्रदर्शन हिंसक हो गए, व्यापक पैमाने पर तोड़फोड़ की घटनाएं सामने आईं, डेढ़ दर्जन से ज्यादा लोगों की जान चली गई। जाहिर है, ऐसी स्थिति फिर से नहीं आने देने के लिए कोई भी सरकार कदम उठाएगी। इस लिहाज से देखें तो उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से विरोध प्रदर्शनों की संभावना और उसके फिर से हिंसक होने की आशंका के मद्देनजर बीस से ज्यादा जिलों में इंटरनेट पर लगाई गई। अस्थायी पाबंदी प्रथम दृष्ट्या उचित ही लगती है। लेकिन सवाल है कि क्या यह मान लिया गया है कि विरोध प्रदर्शनों के दौरान होने वाली हिंसा को सिर्फ इंटरनेट पर पाबंदी लगा कर रोका जा सकता है! इसमें कोई शक नहीं है कि आज इंटरनेट पर निर्भर सोशल मीडिया के कुछ मंचों का सहारा लेकर कई बार झूठे ब्योरे फैलाए जाते हैं और उसकी वजह से अराजक स्थिति पैदा हो सकती है। लेकिन ऐसी घटनाएं तब भी होती देखी गई हैं, जब इंटरनेट की सुविधा स्थगित हो। ऐसे में किसी ऐसे माध्यम पर बड़े इलाके में पाबंदी लगाने को कैसे अकेला उपाय मान लिया जाता है जिस पर समूची व्यवस्था का ज्यादातर हिस्सा निर्भर हो!

गौरतलब है कि इस साल अब तक देश में सौ से ज्यादा बार इंटरनेट पर पाबंदी लगाई जा चुकी है। आमतौर पर हिंसा की आशंका, बिगड़ती कानून-व्यवस्था और अफवाहों पर लगाम लगाने के लिए यह कदम उठाया जाता है। लेकिन आज इंटरनेट पर निर्भरता का दायरा जितना व्यापक हो गया है, उसमें इस तरह की पाबंदी जैसे कदम से सारे कामकाज ठप्प हो जाते हैं। बैंकों के कामकाज, एटीएम सेवा, इंटरनेट आधारित पढ़ाई-लिखाई, कारोबार, पर्यटन, ट्रेन के टिकट लेने या इससे जुड़ी सारी गतिविधियों के रुक जाने से जितनी बड़ी आर्थिक क्षति होती है, उसका आकलन शायद ही कभी किया जाता है। इसके अलावा, कोई अफवाह अगर फैल गई है तो इंटरनेट के सहारे ही प्रशासनिक स्तर पर उसकी हकीकत तेज गति से बता कर उस पर लगाम लगाने की गुंजाइश भी बाधित होती है। जबकि किसी तरह की अव्यवस्था या अराजकता की स्थिति से निपटने में संचार सेवा की भूमिका आज काफी ज्यादा बढ़ गई है। कानून-व्यवस्था कायम रखने के लिए सरकार के पास निषेधात्मक कार्रवाई करने के तमाम उपाय मौजूद हैं। लेकिन पूरी तरह पाबंदी का असर सूचना के प्रसार से लेकर आम लोगों की रोजी-रोटी तक पड़ता है, जिनका किसी तरह की अराजकता से कोई लेना-देना नहीं होता।

अगर सरकार को लगता है कि किसी खास गतिविधि से अशांति, अराजकता और हिंसा फैलने की आशंका है, तो वह उस पर रोक लगाने जैसे कदम उठा सकती है। लेकिन इस तरह की पाबंदी से अगर खुद प्रशासनिक स्तर पर कानून और व्यवस्था लागू करने में बाधा पैदा होती है, अनिवार्य कामकाज बाधित होने की स्थिति पैदा हो जाती है, तो यह दूसरी तरह से पैदा हुई अव्यवस्था ही है। इसलिए उम्मीद की जाती है कि सरकारें और प्रशासन गंभीर असर वाले सख्त कदम को प्राथमिक उपाय नहीं मान कर तब ऐसी पहलकदमी करेगी, जब कोई अन्य विकल्प नहीं बचा हो। विडंबना यह है कि हाल के दिनों में किसी मसले पर होने वाले विरोध प्रदर्शनों में हिंसा की आशंका जता कर सरकार की ओर से इंटरनेट पर पाबंदी को प्राथमिक और सबसे महत्त्वपूर्ण रास्ता मान लिया गया है। इससे हिंसा फैलाने में इंटरनेट का सहारा लेने वाले लोगों को अपनी मंशा पूरा करने में कोई बाधा आती हो या नहीं, लेकिन अराजक समूहों से इतर ऐसे कदम से बहुत सारे लोगों की लोकतांत्रिक तरीके से अभिव्यक्ति का अधिकार भी बाधित होता है।

मुआवजा और सवाल

जासूसी के आरोपों में लंबे समय तक मुकदमे की प्रताड़ना झेलने के बाद बरी होने वाले इसरो के पूर्व वैज्ञानिक एस नांबी नारायणन को केरल सरकार ने अब मुआवजे के तौर पर एक करोड़ तीस लाख रुपए देने का फैसला किया है। केरल सरकार ने यह मेहरबानी इसलिए नहीं की है कि विज्ञान के क्षेत्र में नांबी नारायणन का बड़ा योगदान रहा या झूठे मुकदमे में फंसाए जाने से उन्हें प्रताड़ना झेलनी पड़ी या केरल सरकार उनके प्रति कोई सद्भाव दिखा रही है, बल्कि नांबी नारायणन ने अदालत में मुकदमा दायर कर मुआवजा बढ़ाने की मांग की थी। इसरो जासूसी कांड से दोषमुक्त साबित होने के बाद सुप्रीम कोर्ट ने नांबी नारायणन को पचास लाख रुपए बतौर मुआवजा देने के लिए राज्य सरकार को निर्देश दिया था। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने भी उन्हें दस लाख रुपए का मुआवजा देने के लिए राज्य सरकार से कहा था। इसके बाद नांबी नारायणन ने फिर से स्थानीय अदालत का दरवाजा खटखटाया और मुआवजा राशि बढ़ाने की मांग की। इसलिए सरकार हरकत में आई और एक करोड़ तीस लाख रुपए देने को मजबूर हुई, ताकि मामला तूल न पकड़े। जासूसी कांड में नांबी नारायणन के पाक साफ निकलने के बाद राज्य और केंद्र सरकार को जम कर आलोचनाओं का सामना करना पड़ा था। हालांकि इस साल गणतंत्र दिवस पर उन्हें पद्म भूषण से सम्मानित भी किया गया। लेकिन सवाल है कि ये क्या डेढ़-दो करोड़ रुपए का मुआवजा और पद्म सम्मान उनकी पीड़ा को कम कर सकते हैं? सरकारी तंत्र की लापरवाही, निकम्मेपन और साजिश की वजह से नांबी नारायणन ने अपने जीवन में जो खोया क्या वह उन्हें वापस मिल पाएगा?

आज सवाल इस बात का नहीं है कि नांबी नारायणन को कितना मुआवजा मिला, क्या सम्मान मिला। सवाल ये है कि जिन लोगों ने नांबी नारायणन का जीवन तबाह कर डाला, क्या उनकी पहचान हुई? अगर हुई तो क्या उनमें से किसी के खिलाफ कार्रवाई शुरू हुई? सुप्रीम कोर्ट ने मनगढ़ंत मामला बनाने और नारायणन की गिरफ्तारी और उन्हें भयानक प्रताड़ना देने को लेकर केरल पुलिस की भूमिका की जांच के लिए उच्चस्तरीय जांच का भी आदेश दिया था। पर अभी तक केरल सरकार ने इस दिशा में कोई बड़ा कदम उठाया हो और दोषियों का पता लगा कर सजा दी हो, देखने को नहीं मिला है। यह घटनाक्रम भारत के पुलिस तंत्र और उसकी कारगुजारियों की पोल खोलने के लिए काफी है। पुलिस कैसे और किसके इशारे पर क्या-क्या कर सकती है, और कैसे एक बड़े वैज्ञानिक का जीवन खत्म कर सकती है, नांबी नारायणन के मामले से यह साफ हो जाता है। अगर मामला सीबीआइ को नहीं सौंपा जाता तो सच कभी सामने नहीं आ पाता।

जासूसी मामले में बरी होने के बाद नारायणन ने अपनी किताब 'रेडी टू फायर: हाउ इंडिया एंड आइ सरवाइव्ड द इसरो स्पाई केस' में इसरो जासूसी मामले को परत दर परत खोला है और बताया है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कैसे साजिशें रच कर भारत के क्रायोजनिक इंजन विकास में पंद्रह साल की देरी करवाई गई। नवंबर 1994 में नारायणन जब गिरफ्तार किए गए थे, तब वे स्वदेशी क्रायोजनिक इंजन परियोजना के प्रमुख थे। देश के एक होनहार वैज्ञानिक को अपने जीवन का लंबा वक्त कानूनी लड़ाई में झोंकने को मजबूर होना पड़ा और सिर्फ पुलिस की करतूतों से। वरना यह वैज्ञानिक देश को अपना अमूल्य योगदान देकर वैज्ञानिक उपलब्धियों से कितना समृद्ध बना सकता था, कोई नहीं जानता।

कल्पमेधा

दूसरों के मन का भाव समझने में समय लगता है, लेकिन कभी-कभी यह बात अपने विषय में भी लागू होती है। बहुत लोग अपने मन के भाव भी नहीं समझ पाते।

– रवींद्रनाथ ठाकुर

धरती को बचाने की अधूरी मुहिम

संजय कुमार सिंह

भारत ने मेड्रिड की इस बैठक में ने इस बात पर जोर दिया कि विकसित देश 2020 से पहले और बाद के लक्ष्यों को हासिल करें और 2050 तक कार्बन निरपेक्षता हासिल करें। भारत को यह सख्त रवैया दिखाना जरूरी इसलिए था कि ज्यादातर विकसित देश 2020 से पहले के अपने लक्ष्यों को हासिल करने में विफल रहे हैं, इन देशों को 2020 तक अपने कार्बन उत्सर्जन में चालीस फीसद तक की कमी लानी थी।

दिल्ली की प्रदूषित हवा से लेकर समुद्री तूफान, प्लास्टिक कचरे और ऐसे कई अन्य कारणों से हमारा भविष्य गंभीर संकट में पड़ता जा रहा है। पर हम अभी तक इसके प्रति पर्याप्त रूप से सचेत नहीं हुए हैं। पर्यावरण और धरती का संकट इंसान का ही खड़ा किया हुआ है, इसलिए इससे निपटना भी हमें ही है। लेकिन पर्यावरण बचाने को लेकर इंसान की लापरवाही इस समस्या से निपटने में सबसे बड़ा रोड़ा साबित हो रही है। यह ऐसी समस्या है जो किसी भी सीमा को नहीं मानती और दुनिया में इतनी सीमाएं हैं कि सबके लिए इस समस्या को एक तरह से लेना संभव भी नहीं है। इसे ऐसे समझिए कि दिल्ली में जब प्रदूषित हवा की बात होती है तो उसका कारण आसपास के शहरों और राज्यों में भी पाया जाता है। दिल्ली की सरकार दूसरी है और आसपास के शहरों-राज्यों की सरकारें दूसरे दल की हैं। ऐसे में न समस्या के प्रति गंभीरता एक जैसी है, न ही एक जैसे हल लागू किए जा सकते हैं। ऐसे में अगर कोई समस्या सारी दुनिया से जुड़ी हो तो उसका हल वाकई मुश्किल है।

जलवायु संकट से निपटने के लिए इमरजंसी घोषित करने वाला ब्रिटेन दुनिया का पहला देश है। जलवायु परिवर्तन पर लंदन में ग्यारह दिनों तक विरोध चलने के बाद ब्रिटेन की संसद ने पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन को लेकर इमरजंसी घोषित की थी। ब्रिटेन के मामले में दिलचस्प बात ये है कि देश में जलवायु परिवर्तन की गंभीरता को देखते हुए विपक्ष ने इमरजंसी घोषित करने का प्रस्ताव किया और सरकार ने इसे मान लिया गया। जबकि भारत में ऐसे मुद्दों पर हम किसी सहमति बनाने के बजाय आपस में लड़ते रहते हैं।

पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं भारी औद्योगीकरण, ऊर्जा संसाधनों के बेहताशा दोहन जैसी गतिविधियों की देन हैं। यूरोप और अमेरिका में पिछली दो सदियों में जिस तेजी से औद्योगिक क्रांति हुई, उसका नतीजा यह हुआ कि कल-कारखानों की संख्या तेजी से बढ़ी और इसके लिए धरती पर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन की एकमात्र साधन बना। आज हालत यह है कि सारे देश खासतौर से पश्चिमी देश एक दूसरे पर जलवायु संकट का ठीकरा फोड़ रहे हैं। जलवायु संकट को लेकर होने वाले वैश्विक सम्मेलनों में बार-बार इसी बात पर जोर दिया जा रहा है ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी लाने के लिए सभी देशों को कार्बन उत्सर्जन शून्य करने की नीतियां तय करनी होंगी और इस लक्ष्य को 2050 तक हासिल करने के प्रयास करने होंगे। सरकारों को ऐसी व्यवस्था करनी होगी जिससे आने वाली हर नई कार या वाहन बिजली से चलने वाला हो, न कि पेट्रोल,डीजल से। यह इस दिशा में किए जा सकने वाला सबसे आसान काम है। भारत में बिजली कारों पर टैक्स कम करके सरकार अपनी जिम्मेदारी से मुक्त हो लेती है, जबकि बिजली वाहनों को चार्ज करने के लिए बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराने की दिशा में कोई प्रयास होते नहीं दिख रहे। अगर हम इस दिशा में काम नहीं करेंगे तो लोग गाड़ियां नहीं खरीदेंगे और पर्यावरण को साफ करने की मुहिम धरी रह जाएगी।

स्वीडन की स्कूली छात्रा ग्रेटा थनबर्ग ने जलवायु परिवर्तन को बड़ा खतरा बताते हुए बड़ा अभियान छेड़ा। ये सब घटनाएं तब हुईं, जब अदालत ने हीथ्रो हवाई अड्डे के विस्तार के तहत नया रनवे बनाने की मंजूरी दे दी, इसके बाद पेरिस के जलवायु समझौते में ब्रिटेन की भागीदारी को खत्म कर दिया गया। जलवायु संकट पर काम कर रहे सलाहकारों ने कहा है कि 2050 तक ग्रीनहाउस गैसों को शून्य तक करना संभव है, लेकिन उसके लिए सार्वजनिक उपभोग, उद्योग और सरकार की नीति में बड़े बदलाव करने होंगे। दूसरी ओर, यह भी तथ्य है कि जो उपाय अभी किए जाएंगे तो उसका प्रभाव 2030 से दिखना शुरू होगा, जबकि 2018 में जलवायु परिवर्तन से संबंधित सभी रिकार्ड टूट चुके हैं।

ऐसे में धरती को बचाने के लिए एक वैश्विक योजना और कार्यक्रम जरूरी है। इसके लिए स्पेन की राजधानी मेड्रिड में वार्षिक संयुक्त राष्ट्र जलवायु सम्मेलन-कांफ्रेंस ऑफ द पार्टीज (कॉप-25) पिछले दिनों संपन्न हुआ था। इस बार आयोजन से जुड़ी खास बात यह रही कि आयोजनकर्ता यूएनएफसीसीसी (युनाइटेड नेशंस फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज) की स्थापना के पच्चीस वर्ष पूरे हुए हैं। 1992 में पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन का आयोजन ब्राजील की राजधानी रियो द जनेरियो में हुआ था। रियो सम्मेलन में तय हुआ था कि यूएनएफसीसीसी के सदस्य राष्ट्र हर

साल इकट्ठे होंगे और जलवायु संबंधित चिंताओं और कार्य-योजनाओं पर चर्चा करेंगे। इस सम्मेलन को कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज (सीओपी या कॉप) नाम दिया गया था। पहला कॉप सम्मेलन 28 मार्च से सात अप्रैल 1995 तक जर्मनी की राजधानी बर्लिन में हुआ था।

पृथ्वी के धरातल पर निश्चित समय में तापमान एवं वर्षा में आए असंतुलन को जलवायु परिवर्तन कहते हैं। मनुष्यों द्वारा किया गया प्रदूषण और गर्म हानिकारक गैसों का उत्सर्जन जलवायु संकट का प्रमुख कारण माना जाता है। हालांकि यह एक निरंतर प्रक्रिया है और जलवायु परिवर्तन पृथ्वी की उत्पत्ति से लेकर आज तक चल रहा है। रियो बैठक में पर्यावरण की रक्षा के लिए एक व्यापक संधि पर सहमति बनी थी। इसके साथ दो और संधियों की परिकल्पना की गई थी। इसमें एक है, जैव विविधता पर संयुक्त राष्ट्र का सम्मेलन और दूसरा बढ़ते रेगिस्तान पर संयुक्त राष्ट्र का सम्मेलन। पर्यावरण से जुड़े ये सम्मेलन बड़े महत्त्व के हैं। इस बार मेड्रिड में जुटे वार्ताकारों ने जलवायु परिवर्तन पर सबसे मुश्किल समझे जाने वाले मुद्दों को निपटाने की कोशिश की, ताकि जलवायु परिवर्तन पर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्रवाई की दिशा में बढ़ा जा सके।

भारत ने मेड्रिड की इस बैठक में ने इस बात पर जोर दिया कि विकसित देश 2020 से पहले और बाद के लक्ष्यों को हासिल करें और 2050 तक कार्बन निरपेक्षता हासिल करें। भारत को यह सख्त रवैया दिखाना जरूरी इसलिए था कि ज्यादातर विकसित देश 2020 से पहले के अपने लक्ष्यों को हासिल करने में विफल रहे हैं, इन देशों को 2020 तक अपने कार्बन उत्सर्जन में चालीस फीसद तक की कमी लानी थी। विकसित देशों को 2050 तक हर हाल में कार्बन निरक्षेपता का लक्ष्य हासिल करना है, यानी वे उतना ही उत्सर्जन करें जितना सोखने की क्षमता उनके पास है।

यूरोपीय संघ ने वर्ष 2050 तक संपूर्ण रूप से कार्बन उत्सर्जन शून्य करने का संकल्प लिया है। सदस्य देशों वाले ब्लॉक में पोलैंड एकमात्र देश है जिसने इस संकल्प पर सहमति नहीं दी है। कुछ समूहों ने योजनाओं पर आगे बढ़ने के लिए वित्तीय संसाधनों की मांग की है, जिनमें तकनीक हस्तांतरण और क्षमता निर्माण के लिए मदद शामिल हैं। लेकिन सबसे ज्यादा जरूरी है सांस्कृतिक बदलाव लाना, ताकि हर कोई यह बुनियादी सवाल पूछे कि अपना कार्बन उत्सर्जन घटाने के लिए मैं क्या कर रहा हूं?

सबसे बड़ा सवाल और लक्ष्य कार्बन उत्सर्जन को शून्य पर लाने का है। चौदह क्षेत्रों, करीब चार सौ शहरों, सात सौ छियासी व्यवसायों और सोलह निवेशकों ने कहा है कि वे वर्ष 2050 तक कार्बन उत्सर्जन शून्य करने की दिशा में काम कर रहे हैं। इससे साफ पता चल रहा है कि सरकारी और गैरसरकारी स्तर पर जलवायु परिवर्तन से जुड़ी आपात स्थिति से निपटने की अहमियत और सख्त जरूरत को पहचाना जा रहा है। करीब पौने दो सौ कंपनियों ने कार्बन उत्सर्जन घटाने के लिए महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य रखने का संकल्प किया है, ताकि जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से बचा जा सके। लेकिन अफसोस की बात यह है कि मेड्रिड सम्मेलन जिस उद्देश्य के लिए हुआ, वह पूरा नहीं हुआ और जलवायु परिवर्तन के खिलाफ वैश्विक कार्ययोजना नहीं बन पाई।

नजरिए का फर्क

प्रदीप उपाध्याय

दुनिया मेरे आगे

लोग कहते हैं कि आप हर बात को एक ही नजर से देखते हैं। उनका कहना जायज हो सकता है, क्योंकि जब आपका नजरिया ही एकतरफा होगा तो नजर भी वही रहेगी। नजर-नजर का फर्क रहता है। हरेक व्यक्ति की किसी बात को देखने और समझने की एक दृष्टि होती है और उसी के अनुसार उसका दृष्टिकोण भी रहता है। यानी सोचने-समझने का नकारात्मक या सकारात्मक पक्ष हो सकता है। अगर आपकी सोच ही संकुचित होगी तो स्वाभाविक है कि आपके आचार-विचार और दृष्टिकोण भी संकुचित होंगे।

पिछले दिनों अयोध्या में सरयू के तट पर लाखों की संख्या में दीप जलाकर एक रिकॉर्ड कायम किए जाने के दौरान एक झुग्गी-झोपड़ी निवासी छोटी-सी बच्ची द्वारा बुझे दीपों से तेल संचित कर बोतल में भरने के सोशल मीडिया पर वायरल चित्र ने मुझे उद्वेलित कर दिया। इसी को आधार बना कर मैंने कल्पना की कि उस बच्ची को ऐसे बोतल भरते देख वहां उपस्थित चौकीदार ने उसे दो तमाचे जड़ते हुए भगा दिया और बोतल छीन कर फेंक दी और इस तरह उस बच्ची के घर इस बार भी दिवाली पर अंधेरा ही रहा।

यह मेरी नकारात्मक सोच थी। ऐसी सोच जब मैंने अपनी एक दीदी को सुनाई तो वह बोली कि इसे इस तरह से भी देखा जा सकता है कि उस लड़की को बुझे हुए दीपों से तेल भरते देख कर चौकीदार का मन पसीज गया और उसने साथ में तेल से भरे हुए दीप भी दे दिए और उस कन्या की झोपड़ी भी दिवाली पर जगमगा उठी। वास्तव में यह सोच का फर्क है। मैंने बुराई खोजी तो इसी पर दूसरा नजरिया सकारात्मक था। अब वास्तव में क्या हुआ होगा, उसे वह बच्ची और उसका परिवार ही जानता है। लेकिन किसी उत्सव के बुझे दीपों से किसी गरीब बच्ची का तेल जमा करना कोई आदर्श स्थिति तो नहीं ही है।

दरअसल, हम अपनी संकुचित मानसिकता के चलते नकारात्मक प्रभाव की ओर तो तुरंत बढ़ जाते हैं, लेकिन सकारात्मकता नहीं देख पाते हैं। दृष्टि वही होती है, दृष्टिकोण अलग-अलग हो सकते हैं। हमारे सामने एक चित्र रखा जाता है, चित्र में चित्रकार की अपनी कल्पना रहती है, लेकिन देखने वालों का समझने और उसकी व्याख्या करने का अपना अलग नजरिया हो सकता है। नकारात्मक सोच वाला व्यक्ति उसमें कमियां खोजेगा तो दूसरी ओर सकारात्मक सोच रखने वाला व्यक्ति उसकी खूबियों को बताएगा।

यों भी आजकल हमारा दृष्टिकोण ही ऐसा हो गया है कि हरेक बात में कमियां निकाल कर सामने रख देते हैं। सरकार की कोई योजना आई नहीं कि विपक्षी दल उसके सकारात्मक पक्ष को न देखते हुए बहुतेरी खामियां निकाल कर आलोचना शुरू कर देते हैं। ठीक इसी तरह विपक्षी दल द्वारा सरकारी योजना और कार्यक्रमों में दर्शायी गई वास्तविक कमियों और कठिनाइयों को सत्ता पक्ष खुले दिल से स्वीकार न कर इन्हें महज विरोध के रूप में देखता है। जबकि इन सब बातों को सही नजरिए से लेकर खुले दिल से स्वीकारा जाना चाहिए।

यह तो सार्वजनिक जीवन की बात हुई। हम अपने व्यक्तिगत जीवन में भी कितने संकुचित, असहिष्णु और दुराग्रही विचारों के हो जाते हैं। कोई हमें हमारे हित की बात कहता है तो हमारी सोच उस बात में सामने वाले का स्वार्थ खोजती है। मान लीजिए कि सामने वाले का स्वार्थ भी है, तब भी उसकी कही बात में अगर जरा-सा भी हमारे हित की बात है, तो उसे खुशी-खुशी स्वीकार किया जाना चाहिए।

हरेक बात में कमियां, बुराइयां, विसंगतियां देखने के स्थान पर हमें उसके सकारात्मक पक्ष को तरजीह देना सीखना होगा। ऐसा नहीं है कि सभी बातें अलाभकारी या अहितकारी ही हों। हमें अच्छाइयों को खोजने और देखने का भी अभ्यास होना चाहिए। हमें अपनी इस अवधारणा का परित्याग कर देना चाहिए कि पूरी दुनिया ही बुरी है। अगर बुराइयां हैं तो इसका दूसरा पहलू यह है कि दुनिया अच्छी भी है। बात वही है कि पानी से भरे आधे ग्लास को आप किस रूप में देखते हैं। यानी हमारा नजरिया यह हो सकता है कि ग्लास आधा भरा हुआ है, लेकिन नजरिया यह भी हो सकता है कि यह तो आधा खाली है। नजरिए का फर्क है। अगर शुरू से ही यह मान कर चलेंगे कि नहीं, हरेक व्यक्ति बुरा है, हरेक व्यक्ति भ्रष्टाचारी है, दुराचारी है तो हमारी धारणा ही वैसी बन जाएगी। तब ईमानदार व्यक्ति भी हमें बेईमान ही दिखाई देगा।

मैंने एक सज्जन को हमेशा यह कहते हुए सुना है कि ईमानदार लोगों के लिए इस दुनिया में कोई जगह नहीं है। ऐसे ही कुछ लोगों को यह भी कहते सुना है कि सच्चाई का यहां कोई मोल नहीं है। लेकिन यह सही नहीं है। व्यक्ति अपने कर्म, वचन और धर्म से ईमानदार और सच्चा बना रहे तो निस्संदेह उसे एक न एक दिन मान्यता मिलेगी ही। इसके लिए व्यक्ति में साहस के साथ सामने आने वाली बातों, विचारों, कार्यों को सही नजरिए से देखने का माद्दा होना जरूरी है।

जनहित से इतर

इस देश में जो सबसे जरूरी मुद्दे हैं, मसलन अस्पतालों में दवाइयों और ऑक्सीजन के अभाव में मरते इस देश के हजारों-लाखों नौनिहालों के लिए इस सरकार के पास पैसे की किल्लत है, लाखों प्राथमिक स्कूलों के खंडहर में बदलते भवनों के लिए बिल्कुल धनाभाव है, लाखों किसानों की खुदकुशी करने का कारण हर वर्ष उनको कृषि में हो रहे नुकसान को कम करने और उनकी फसलों का उचित मूल्य देने में इस सरकार की आर्थिक स्थिति लड़खड़ा जाती है, लेकिन दूसरी तरफ व्यर्थ के मुद्दों, जिनका आमजन के जीवन के जीने-मरने से कोई सरोकार नहीं है, उसे लेकर तूफानी गति से काम किया जाता है। राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर, बुलेट ट्रेन, कुंभ मेला, चार धाम सड़क योजना, दुनिया में पटेल की सबसे ऊंची मूर्ति, अयोध्या में करोड़ों रुपए बहा कर दिवाली मनाने आदि व्यर्थ के मुद्दों पर अरबों-खरबों रुपए खर्च कर देने में इन सरकारों को जरा भी देर नहीं लगती!

कितने दुख और अफसोस की बात है कि इन सरकारों के सत्ता के कर्णधार सत्ता में आने से पूर्व जनता से 'सभी के अच्छे दिन लाने' के वादे के बल पर सत्तारूढ़ होती हैं, फिर वही विलासिता, व्यर्थ के मुद्दों और अनर्गल प्रलाप करना शुरू कर देतीं हैं। आखिर भारत की जनता कब तक इन जुमलेबाजों के जाल में फंसती रहेगी? यह एक अंतहीन सिलसिला कब तक चलेगा? क्या कभी चुनाव से पूर्व अपने किए वायदों को ईमानदारी से लागू कर, जनहित, देशहित में काम करने वाले सच्चे, सच्चरित्र और ईमानदार नेता इस देश से विलुप्त हो गए हैं? सभी एक से बढ़ कर एक झूठे, चालबाज, चोंचलेबाज और जुमलेबाजी करने वाले ही नेतृत्व करने वाले नेता ही बचे हुए लगते हैं। क्या कभी इस देश में छाए घुप्प अंधेरे को तिरोहित करने वाला आशा की किरण जगाने वाला वास्तविक सूर्योदय भी होगा? देश में वास्तविक सूर्योदय होने में इतनी देरी क्यों हो रही है?

● *निर्मल कुमार शर्मा, गाजियाबाद*

मंदी की चपेट

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) द्वारा जारी निर्देश में कहा गया कि भारतीय अर्थव्यवस्था गंभीर सुस्ती के दौर में है। दरअसल, वित्त वर्ष 2019-20 में भारतीय अर्थव्यवस्था बुरी तरह से मंदी की चपेट में है, जिसके परिणामस्वरूप राजकोषीय घाटे में निरंतर वृद्धि हुई है। विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों पर गहराए संकट का अर्थव्यवस्था पर इतना बुरा असर हुआ है कि श्रमिक वर्ग के लाखों लोगों को रोजगार से हाथ धोना पड़ा। सरकार द्वारा भारी-भरकम पैकेज प्राप्त करने के बावजूद वित्त और गैर-वित्त बैंक संतोषजनक परिणाम देने में नाकाम साबित हुए। इस गंभीर समस्या से उबरने और गहराती अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए सरकार को तत्काल नीतिगत उपाय करने चाहिए और उन पर अमल सुनिश्चित करना चाहिए। वरना फिजूल के उन्माद फैलाने वाले मुद्दों में देश को उलझाने से अंतिम तौर पर देश कमजोर होगा और इसका खमियाजा देश को लंबे समय तक उठाना पड़ सकता है।

● *मोहम्मद शायान, कैराना*

धर्म की जगह

भारत में पंथनिरेक्षता का अर्थ है कि राज्य का कोई धर्म नहीं होता है। हमारा संविधान भी धार्मिक स्वतंत्रता की गारंटी देता है। भारत सर्वधर्म समभाव की नीति को अपनाता है। लेकिन वर्तमान समय की स्थिति काफी भयानक है। इस समय हम आए दिन मॉब लिचिंग, धार्मिक संघर्ष जैसी बहुत-सी घटनाएं होते देख रहे हैं। धर्म का प्रयोग बड़े स्तर पर राजनीतिक क्षेत्र में किया जा रहा है। यहां तक कि अब क्षेत्र के बहुसंख्यक जाति के आधार पर उम्मीदवार को चुनते हैं । राज्य स्तर पर भी बहुसंख्यक धर्म को ज्यादा महत्त्व दिया जा रहा है। अफसोस की बात यह है कि यह सब हमारी घोषित पंथनिरपेक्षता के बावजूद चल रहा है, जबकि भारत का संविधान धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार देता है और धार्मिक भेदभाव पर रोक लगता है। लेकिन बहुसंख्यक आबादी के धर्म की राजनीति देश के बुनियाद को काफी नुकसान पहुंचा सकता है। यों भी मानवीयता किसी भी धर्म और उसकी राजनीति से श्रेष्ठ मूल्य है। अगर धर्म और उसकी विचारधारा मानवीयता को बाधित करती है तो उसे त्याज्य माना जाना चाहिए।

● *मृत्युंजय सिंह, इलाहाबाद विवि, प्रयागराज*

कुपोषित विकास

भारत में पोषण की स्थिति काफी खराब हैं, यह सामाजिक आर्थिक स्थितियों को देख कर कहा जाता रहा है। लेकिन सच यह है कि वैश्विक सूचकांक में भी इस मामले में भारत को 199 देशों में से 103 वां स्थान मिल पाया है। इसमें गरीब तबकों के साथ कुछ अन्य तबकों के परिवारो की स्थिति भी चिंताजनक पाई गई है। दरअसल भारत को एक समग्र दृष्टिकोण को अपनाने की जरूरत है, जिसमें किफायती दर पर पर्याप्त पोषण मिले। नीतिगत स्तर पर इस ओर पहलकदमी नहीं हुई और केवल चिंता जताई जाती रही तो देश में सेहत की स्थिति इसी तरह दयनीय रहेगी और वैश्विक अध्ययनों में भारत को एक अभाव वाले देश के रूप में देखा जाता रहेगा। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि कुपोषण के रहते विकास के तमाम दावे खोखले ही रहते हैं। इससे समाज कमजोर होता है और इसका असर देश पर पड़ता है। सवाल है कि ऊपरी चकाचौंध के तले पलते अंधेरे देश के भविष्य को किस दिशा में ले जाएगा?

● *पारस मल बोस, बाड़मेर, राजस्थान*

उपभोक्ता का हक

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अनुसार कोई व्यक्ति जो अपने उपयोग के लिए सामान खरीदता है, वह उपभोक्ता है। आज उपभोक्ता जमाखोरी, कालाबाजारी, मिलावट, अधिक दाम, कम नाप-तौल आदि संकटों से घिरा है। उपभोक्ता चूंकि संगठित नहीं है, इसलिए हर जगह ठगे जाते हैं। दरअसल, कम उपभोक्ता जानते होंगे कि अगर वे खरीद-बिक्री संबंधी धोखाधड़ी, कालाबाजारी, घटतौली आदि के शिकार होते हैं तो ऐसी स्थिति में उन्हें शिकायत करने का अधिकार है। अब नए उपभोक्ता कानून में प्रस्तावित संशोधन के बाद ग्राहकों को प्रोडक्ट रिकॉल, मनी रिफंड और मनी रिटर्न का अधिकार भी मिल जाएगा। साथ ही मध्यस्थता का प्रावधान भी जुड़ जाएगा। फिर कंपनी और ग्राहक मध्यस्थ की मौजूदगी में विवाद का निपटारा कर सकते हैं। जिला फोरम और राज्य आयोग में हारने के बाद कंपनी राष्ट्रीय उपभोक्ता आयोग नहीं जा सकेगी। महत्त्वपूर्ण यह है कि फैसला नहीं मानने पर छह महीने की कैद और बीस लाख रुपए का जुर्माना लगेगा।

● *अमन सिंह, बरेली, उत्तर प्रदेश*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

www.readwhere.com